काशी मठ संस्थान एवं अन्य.

बनाम

श्रीमद सुधींद्र तीर्थ स्वामी एवं अन्य

(2009 की सिविल अपील संख्या 7966-7967)

2 दिसंबर, 2009

(तरूण चटर्जी, एचएल दत्तू .जे.जे.)

सिविल प्रक्रिया संहिता 1908-O.39 RR. नियम 1 व 2 सपठित धारा 151 और आदेश 41 नियम 5 सपठित धारा 151- अस्थायी निषेधाज्ञा और डिक्री का स्थगन-वादी को मठाधिपति घोषित करने के लिये और प्रतिवादी को मठाधिपति के रूप में कार्य करने से रोकना-विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को यथास्थिति बनाये रखने का अंतरिम आदेश पारित किया-अंतिम निर्णय में वाद खारिज किया गया-उच्च न्यायालय में अपील-अपील के लम्बन के दौरान अंतरिम निषेधाज्ञा चाही गई-उच्च न्यायालय द्वारा अस्वीकार की गई। उच्च न्यायालय की अपील पर यह प्रतिपादित किया गया कि-नीचली अदालतों के निष्कर्षो से यह प्रकट होता है कि वादी प्रथम दृष्टया अपने पक्ष में मामला बनाने में असफल रहा है तथा सुविधा का संतुलन भी उसके विरूद्ध था-अन्तर्ववर्ती आदेश-

अपीलार्थी नंबर 2 ने स्वयं को मठाधिपति और 21 वां मठाधीश घोषित कराने का दावा पेश किया। उसमें यह भी अनुतोष चाहा कि प्रतिवादी को मठाधिपति के रूप में शक्तियों, विशेष अधिकारों और कर्तव्यों को करने से रोकने के लिये स्थायी निषेधाज्ञा से पाबन्द किया जावे। उत्तरदाता नंबर 1 ने अपने जवाब दावे व प्रतिदावे में यह कहा कि चूंकि वह मठ के मठाधिपति के रूप में कार्य कर रहा है इसलिये अपीलार्थी नंबर 2 को उसे उक्त कार्य करने में तंग परेशान करने का कोई अधिकार नहीं है। दौराने वाद विचारण न्यायालय द्वारा अन्तरिम निषेधाज्ञा देते हुए अपीलार्थी नंबर 2 के पक्ष में यथास्थिति का आदेश पारित किया। अंतिम निर्णय में विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी नंबर 2 के दावे को खारिज करते हुए उत्तरदाता नंबर 1 के प्रतिदावे को स्वीकार किया।

अपीलार्थी द्वारा 2 अपील पेश की गई। उन्होंने आदेश 39 नियम 1 व 2 सपठित धारा 151 और आदेश 41 नियम 5 सपठित धारा 151 के प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करते हुए अस्थायी निषेधाज्ञा और डिक्री के स्थगन का अनुतोष भी चाहा। उच्च न्यायालय द्वारा उक्त प्रार्थना पत्रों को खारिज किया गया इसलिये यह अपीलें पेश की गई।

न्यायालय द्वारा अपीलें अस्वीकार करते हुये अभिनिर्धारित की गयी

प्रतिपादित किया कि 1.1 संविधान के अनुच्छेद 136 में अन्तर्विहित विवेकाधीन शक्तियों के तहत उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करने

का कोई कारण नहीं है क्योंकि अपीलार्थी नंबर 2 अपने पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला बनाने में असफल रहा है और सुविधा का संतुलन भी उसके विरूद्ध है। विचारण न्यायालय ने अपने आदेश में महत्वपूर्ण दस्तावेजों के साथ मौखिक साक्ष्यों के ध्यानपूर्वक अवलोकन के बाद इस नतीजे पर पहुंची है कि अपीलार्थी नंबर 2 ने अपने पक्ष में निषेधाज्ञा प्राप्त करने हेतु प्रथम दृष्टया मामला बनाने में असफल रहा है। इसी वजह से अपीलार्थी नंबर 2 विवेकाधीन अनुतोष निषेधाज्ञा प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। (पैरा नंबर 12 व 18)(1317-एफजी, 1324 सीडी)

1.2 यह सुस्थापित है कि निषेधाज्ञा का आदेश प्राप्त करने के लिए, जो पक्ष इस तरह के निषेधाज्ञा की मांग करता है, उसे यह साबित करना होगा कि उसने मुकदमे में प्रथम दृष्टया मामला विचारण के लिए बनाया है, सुविधा का संतुलन भी उसी के पक्ष में है और यदि निषेधाज्ञा नहीं दी गई तो उसे अपूरणीय क्षति होगी। लेकिन यह भी समान रूप से स्थापित है कि जब कोई पक्ष मुकदमे के लिए प्रथम दृष्टया मामला साबित करने में विफल रहता है, तो सुविधा के संतुलन या संबंधित पक्ष को अपूरणीय क्षति और चोट पर विचार करने का प्रश्न बिल्कुल भी महत्वपूर्ण नहीं होगा, अर्थात यदि वह पक्ष मुकदमे के विचारण के लिए प्रथम दृष्टया मामले को साबित करने में विफल रहता है तो न्यायालय उसके पक्ष में निषेधाज्ञा देने के लिए खुली नहीं है, भले ही उसने सुविधा के संतुलन का मामला अपने पक्ष में

बना लिया हो और यदि कोई निषेधाज्ञा आदेश नहीं दिया गया उसे अपूरणीय क्षति सामना करना पड़े। (पैरा नंबर 13 )(1317-एच, 1318 ए सी)

1.3 विचारण न्यायालय के उपरोक्त निष्कर्ष से, यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी नंबर 1 ने अपीलकर्ता नंबर 2 के पक्ष में मठाधिपति के रूप में अपनी सभी शक्तियों को निरस्त नहीं किया था और उसे केवल कुछ शक्तियां सौंपी गई थीं। अपीलकर्ता नंबर 2 मठ कि कुछ गतिविधियों से मुक्त होना चाहता था और उन्होंने वास्तव में इस संबंध में प्रतिवादी नंबर 1 से अनुमति मांगी थी। इसलिए, अंतिम निर्णय में विचारण न्यायालय द्वारा यह सही माना गया कि अपीलकर्ता नंबर 2 ने 1994 की कथित उद्घोषणा के बाद भी प्रतिवादी नंबर 1 को मठ का मठाधिपति मानना जारी रखा।(पैरा नंबर 13 )(1319-सी-ई)

1.4 मठ के मठाधिपति की शक्तियों को अपीलकर्ता नंबर 2 के पक्ष में नहीं छोड़ा गया था। यह सुस्थापित है कि मठ के मठाधिपति की ऐसी शक्ति मौजूदा मठाधिपति की मृत्यु के बाद किसी अन्य व्यक्ति या किसी अन्य को हस्तांतरित हो सकती है, जो मठ के रीति-रिवाजों और परंपराओं के अनुसार मठ के मठाधिपति के रूप में उसका उत्तराधिकारी हो सकता है। (पैरा नंबर 13 )(1320-ए-बी)

1.5 यह सही है कि चूंकि उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित अपीलों

का निर्णय भी तथ्यों के आधार पर किया जाना है, इसलिए मूल रूप से इस स्थिति को उच्च न्यायालय द्वारा बनाए रखने की आवश्यकता है। लेकिन वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और अपीलकर्ता नंबर 2 को दिए गए अधिकारों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अपीलकर्ता नंबर 2 ने सुनवाई के लिए प्रथम दृष्टया कोई मामला बनाने में विफल रहने के कारण, हमें नहीं लगता कि उच्च न्यायालय द्वारा अपील के निस्तारण तक ऐसी स्थिति को जारी रखने की अनुमति दी जानी चाहिए। (पैरा नंबर 14 )(1320-सी-ई)

1.6 हालांकि विचारण न्यायालय ने पार्टियों को मुकदमे के निस्तारण तक मठ के मठाधिपति के कामकाज के मामले में यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया था, लेकिन ऐसा आदेश इस निष्कर्ष परं दिया गया था कि अपीलकर्ता नंबर 2 यथास्थिति का आदेश प्राप्त करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला साबित करने में विफल रहा था। इसके अलावा, यह स्थापित है कि जब पक्षकारान विचारण के लिये जाते हैं और अपने पक्ष के समर्थन में साक्ष्य पेश करते हैं तब न्यायालय के समक्ष प्रकरण के निस्तारण के समय अलग निष्कर्ष पर पहुंचने और तदनुसार राहत देने के लिए न्यायालय के पास खुला होगा। (पैरा नंबर 14)(1321-ई-जी)

1.7 मुकदमे का फैसला करते समय, विचारण न्यायालय ने मठाधिपति के शीर्षक की घोषणा के संबंध में कहा कि प्रतिवादी संख्या 1

ने कभी भी अपीलकर्ता संख्या 2 के पक्ष में मठ के मठाधिपति के रूप में अपनी शक्तियों को निरस्त नहीं किया था और इसलिए, सबूतों का आकलन करने और पक्षकारान के विद्वान वकील की प्रस्तुतियों के बाद, स्थायी और आज्ञात्मक निषेधाज्ञा के लिए एक डिक्री दी है और निर्देश दिया है अपीलकर्ता संख्या 2 को प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में मठ से संबंधित उसके कब्जे में मौजूद पवित्र देवताओं और अन्य सामग्रियों को वापस बहाल करने के लिए कहा गया है। विचारण न्यायालय ने भी अंतिम फैसले में रिकॉर्ड पर मौजूद सभी सबूतों और सामग्रियों पर विचार करने के बाद माना कि सुविधा का संतुलन प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में था और यह कि अपीलकर्ता संख्या 2 यह साबित करने में असफल रहा कि वह तत्कालीन मठाधिपति की उद्घोषणा के बाद 1994 से मठाधिपति के रूप में सफल हुआ, जो कि प्रतिवादी संख्या 1 है। बेशक, विचारण न्यायालय के अंतिम निष्कर्षों पर पहली अपील में उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जाएगा, लेकिन हम इस स्तर पर प्रथम दृष्टया यह नहीं मानते हैं कि ऐसे निष्कर्षों को गलत ठहराया जा सकता है और विचारण न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप की जरूरत है। (पैरा नंबर 14 )(1321-जी-एच, 1322-ए-सी)

1.8 विचारण न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय के उपरोक्त निष्कर्षों का सावधानीपूर्वक अवलोकन और प्रतिवादी नंबर 1 की प्रस्तुति पर विचार करने के बाद भी कि प्रतिवादी नंबर 1 ने केवल अपनी कुछ शक्तियों

को निरस्त किया है, सभी को नहीं और वह अभी भी मठ के मठाधिपति के रूप में बने रहने से प्रथम दृष्टया पता चलेगा कि अपीलकर्ता नंबर 2 यह साबित करने में असफल रहा कि उसे प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा मठ का मठाधिपति बनाया गया था या प्रतिवादी नंबर 1 ने मठ के मठाधिपति के अपने अधिकार को त्याग दिया था। (पैरा नंबर 15 )(1322-ई-जी)

1.9 विचारण न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि मठाधिपति की सीट मौजूदा मठाधिपति के उत्तराधिकारी को उसकी मृत्यु के बाद ही हस्तांतरित की जा सकती है, उससे पहले नहीं, जो कि रीति-रिवाजों और परंपराओं से स्पष्ट है । यह प्रथम दृष्टया स्वीकार्य नहीं है कि प्रतिवादी नंबर 1 ने अपीलार्थी नंबर 2 के पक्ष में मठाधिपति की सीट छोड दी थी और ऐसी सीट अपीलकर्ता नंबर 2 की मृत्यु से पहले ग्रहण की जा सकती थी। मौजूदा मठाधिपति यानी प्रतिवादी नंबर 1 अथवा प्रतिवादी नंबर 1 के द्वारा े निष्पादित दस्तावेज के जरिये मठाधिपति के पद को त्याग कर सकते थे। (पैरा नंबर 17 )(1323-ई-जी)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार- सिविल अपील नंबर 7966-7967/2009

उच्च न्यायालय आन्ध्र प्रदेश, हैदराबाद के ए एस एम पी नंबर 285/2009, ए एस नंबर 90/2009 और ए एस एम पी नंबर

286/2009, ए एस नंबर 91/2009 में पारित निर्णय दिनांक 25.03.2009 से)

आर.एफ नरीमन, रणजीत कुमार, गणेश सिनोय, राजेश माहिल- अपीलार्थी की ओर से।

के.के. वेणुगोपाल, रोमी चाकौ, अंकुर- उत्तरदाताओं की ओर से।

1. अनुमति दी गई .

2. ये दो अपीलें, विशेष अनुमति याचिकाओं के माध्यम से, 25 मार्च, 2009 के एक सामान्य आदेश के खिलाफ दायर की गई हैं, जो कि हैदराबाद में आंध्र प्रदेश के उच्च न्यायालय द्वारा 2009 के एएस नंबर 90 और 91 में पारित किया गया था। उच्च न्यायालय ने घोषणा और निषेधाज्ञा के मुकदमे में अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, चतुर्थ न्यायालय, तिरुपति द्वारा पारित डिक्री के निष्पादन पर रोक लगाने और यथास्थिति बनाए रखने की मांग करने वाले अपीलकर्ताओं द्वारा दायर अंतरिम आवेदनों को खारिज कर दिया था।

3. श्री काशी मठ संस्थान (संक्षेप में ''मठ''), जो यहां अपीलकर्ता नंबर 1 है, की स्थापना 14वीं और 15वीं शताब्दी के बीच हुई थी। यह गौड़ा सरस्वती ब्राह्मण के तीन धर्म पीठों या आध्यात्मिक सिंहासनों में से एक है। समुदाय (संक्षेप में ''जीएसबी' )। प्रतिवादी नंबर 1 अर्थात, श्रीमद

सुधींद्र तीर्थ स्वामी (बाद में ''प्रतिवादी नंबर 1'' के रूप में संदर्भित) तत्कालीन मठाधिपति की मृत्यु के बाद 1949 में या उसके आसपास मठ के मठाधिपति बन गए।

4. 26 अप्रैल, 1989 को प्रतिवादी नंबर 1, जो श्रीमद राघवेंद्र तीर्थ स्वामी (इसके बाद ''अपीलकर्ता नंबर 2'' के रूप में संदर्भित) के गुरु थे, ने उन्हें अपने पट्टा शिष्य और मठ के उत्तराधिकारी के रूप में चुना था। 7 जुलाई, 1989 को प्रतिवादी नंबर 1 ने दीक्षा प्रदान की, जिससे अपीलकर्ता नंबर 2 को संन्यास की दीक्षा मिली। 4 नवंबर, 1994 को, प्रतिवादी नंबर 1 ने कुछ धार्मिक, धार्मिक और सामाजिक गतिविधियों के साथ-साथ मठ का प्रबंधन सौंपा और सभी देवताओं को सामान, प्रतीक चिन्ह आदि के साथ अपीलकर्ता नंबर 2 को सौंप दिया। प्रचलित परंपरा के अनुसार मठ के मठाधिपति को दिन में तीन बार इष्टदेवों की पूजा करनी होती है, जिसे त्रिकाल पूजा कहा जाता है। मठ के प्रमुख के रूप में मठाधिपति ''मुद्रा (प्रतीक चिन्ह), या मठ की मुहर का संरक्षक होता है। प्रतिवादी नंबर 1 ने मठ के कुछ धार्मिक, धार्मिक और सामाजिक गतिविधियों के संबंध में 20 वें पोंटिफ और मठ के प्रमुख के रूप में अपने अधिकारियों, शक्तियों और विशेषाधिकारों को सौंपा, सिवाय हरिद्वार में श्री व्यास आश्रम के और उनके पक्ष में अपीलकर्ता नंबर 2, 12 दिसंबर 1994 से प्रभावी।

5. जीएसबी और प्रतिवादी नंबर 1 के बीच उक्त मठ के मठाधिपति

के रूप में बने रहने के मामले में कुछ गड़बड़ी के कारण, उन्होंने अपीलकर्ता नंबर 2 को मठ के मठाधिपति के रूप में अपने कार्यों का निर्वहन करने से रोकने की मांग की। दूसरी ओर, अपीलकर्ता नंबर 2 ने आरोप लगाया था कि प्रतिवादी नंबर 1 ने मठ के मठाधिपति के मामलों में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया था। इस कठिनाई को देखते हुए, अपीलकर्ता नंबर 2 ने उन्हें मठ के मठाधिपति और 21 वें पोंटिफ के रूप में घोषित करने के लिए एक मुकदमा दायर किया था और प्रतिवादी नंबर 1 को मठ के मठाधिपति के रूप में शक्तियों, कर्तव्यों और विशेषाधिकारों का प्रयोग करने से रोकने के लिए निषेधाज्ञा के लिए भी अनुतोष चाहा था। उक्त वाद अपर जिला तृतीय न्यायाधीश तिरूपति में दायर किया गया था। प्रतिवादी नंबर 1 ने उपस्थिति दर्ज कराते हुए जवाबदावे के साथ यह भी अभिकथित किया कि चूंकि वह मठ का मठाधिपति बना हुआ है, इसलिए अपीलकर्ता नंबर 2 को प्रतिवादी नंबर 1 के कामकाज में बाधा डालने और प्रतिदावे के माध्यम से परेशान करने का कोई अधिकार नहीं है। उन्होंने देवताओं, साज-सामान, प्रतीक चिन्ह और अन्य वस्तुओं की वापसी के लिए प्रार्थना की थी, जो अपीलकर्ता संख्या 2 के कब्जे में थे।

6. मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, अपीलकर्ता नंबर 2 द्वारा निषेधाज्ञा के लिए एक आवेदन दायर किया गया था और ट्रायल कोर्ट ने पार्टियों को मठ के मामलों के साथ-साथ मठाधिपति के कामकाज के संबंध

में मुकदमे के निस्तारण तक यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया था। यह सही है कि विचारण न्यायालय द्वारा दिया गया यथास्थिति का अंतरिम आदेश मुकदमे के लंबित रहने के दौरान प्रभावी था और प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा इसे चुनौती नहीं दी गई थी।

7. विवाद्यक तैयार किए जाने और सबूत पेश किए जाने के बाद, मुकदमे का निस्तारण हेतु चतुर्थ अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, तिरूपति के यहां स्थानांतरण पर कर दिया गया, जिन्होंने अपीलकर्ताओं के मुकदमे को खारिज कर दिया और डिक्री देकर प्रतिवादी नंबर 1 के प्रतिदावे की अनुमति दी। स्थायी/आज्ञात्मक निषेधाज्ञा के लिए अपीलकर्ता नंबर 2 को निर्देश दिया जाए कि वह मुकदमे में फैसले की तारीख से एक महीने की अवधि के भीतर अपने कब्जे में मौजूद वस्तुओं को प्रतिवादी नंबर 1 को सौंप दे।

8. विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री से व्यथित महसूस करते हुए, अपीलकर्ताओं ने हैदराबाद में आंध्र प्रदेश के उच्च न्यायालय के समक्ष दो अपीलें दायर कीं, जिन्हें 2009 के एएस नंबर 90 और 91 के रूप में पंजीकृत किया गया। लंबित अपीलों में, सीपीसी की धारा 151 के साथ पठित आदेश 39 नियम 1 और 2 के तहत निषेधाज्ञा के लिए आवेदन, अस्थायी निषेधाज्ञा की मांग करते हुए, उत्तरदाताओं को मठ के मठाधिपति के रूप में अपीलकर्ता नंबर 2 के कामकाज में किसी भी तरह से हस्तक्षेप

करने से रोकने के लिए प्रार्थना की गई थी। अपीलकर्ताओं ने उसी दिन सीपीसी की धारा 151 के साथ पठित आदेश 41 नियम 5 के तहत 2009 की एएसएमपी संख्या 286 के तहत एक अलग आवेदन दायर किया, जिसमें उपरोक्त दो अपीलों के लंबित रहने के दौरान ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित फैसले और डिक्री पर रोक लगाने की मांग की गई। 25 मार्च, 2009 के एक सामान्य आक्षेपित आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ताओं के आवेदनों को खारिज कर दिया और निर्देश दिया कि ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए डिक्री का निष्पादन उसके समक्ष दायर अपीलों के अंतिम परिणाम के अधीन होगा।

9. अपीलकर्ताओं द्वारा दायर निषेधाज्ञा के आवेदन और स्थगन के आवेदन को खारिज करने के उच्च न्यायालय के इस आदेश से व्यथित महसूस करते हुए, ये दो विशेष अनुमति याचिकाएं दायर की गईं, जिन्हें अनुमति दिए जाने पर, हमारे द्वारा पक्षकारों के विद्वान वकील की उपस्थिति में सुना गया।

10. हमने पक्षों के विद्वान वकील को सुना है और उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश के साथ-साथ विचारण न्यायालय के फैसले की जांच की है, जिसने अपीलकर्ताओं के मुकदमे को खारिज कर दिया था, जिसके संबंध में अपील अब उच्च न्यायालय के समक्ष अंतिम निर्णय के लिये लंबित हैं। हमारे समक्ष, अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील, श्री

आरएफ नरीमन ने प्रस्तुत किया कि चूंकि मठ के मठाधिपति के कामकाज के संबंध में यथास्थिति का एक अंतरिम आदेश मुकदमे के लंबित रहने के दौरान प्रभावी था और विचारणीय मुद्दों पर विचार किया जाना था। पहली अपीलों में उच्च न्यायालय द्वारा विचार किए जाने के बाद, उच्च न्यायालय के लिए यह उपयुक्त और उचित था कि वह पक्षकारों को उस अंतरिम आदेश को बनाए रखने का निर्देश दे, जो मुकदमे के लंबित रहने के दौरान विचारण न्यायालय द्वारा दिया गया था। अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ वकील की इस दलील का उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री के के वेणुगोपाल ने जोरदार विरोध किया। श्री वेणुगोपाल के अनुसार, चूंकि अपीलकर्ता अपील के लंबित रहने के दौरान निषेधाज्ञा का अंतरिम आदेश प्राप्त करने के लिए कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बना सके, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा जारी अंतरिम आदेश को निरन्तर रखने का कोई मुकदमा उत्पन्न ही नहीं हो सकता।

11. पक्षों के विद्वान वरिष्ठ वकील को सुनने के बाद और आक्षेपित आदेश और अपीलकर्ताओं के मुकदमे को खारिज करने वाले विचारण न्यायालय के फैसले को देखने के बाद संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत हमारी विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर.एफ.नरीमन द्वारा हमें सुझाए गए तरीके से अंतरिम आदेश पारित करने का कोई योग्य कारण नहीं मिला।

12. विचारण न्यायालय के फैसले का अवलोकन, जिसके संबंध में अपील अब उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है, स्पष्ट रूप से दिखाएगा कि अपीलकर्ता नंबर 2 को श्री काशी मठ संस्थान की कुछ धार्मिक, धार्मिक और सामाजिक गतिविधियों को सौंपा गया था केवल प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा व्यास आश्रम हरिद्वार को छोड़कर। उपरोक्त निर्णय से यह भी स्पष्ट होता है कि अपीलकर्ता सं. 2 ने स्वयं प्रतिवादी नंबर 1 से उसे कुछ कर्तव्यों से मुक्त करने का अनुरोध किया था। उक्त निर्णय से यह भी प्रतीत होता है कि पूरी परेशानी तब शुरू हुई, जब अपीलकर्ता नं. 2 ने अपनी व्यक्तिगत हैसियत से एक बैंक खाता खोला था। मुकदमे में यह भी पाया गया कि अपीलकर्ता नं. 2 ने मुकदमा दायर करते समय यह साबित करने के लिए कि वह मठ के मठाधिपति के रूप में नियुक्त किया गया था, प्रदर्श पी-1 से पी-3 पेश करने के अलावा कोई अन्य दस्तावेज पेश नहीं किया था। इसके अलावा, उपरोक्त निर्णय यह भी नहीं दिखाएगा कि अपीलकर्ता नंबर 2 ने कभी भी टीटी देवस्थानम को मंदिर सम्मान के लिए अपने दावे के बारे में कुछ भी बताया था। इसके अलावा, विचारण न्यायालय ने अपने फैसले में सावधानीपूर्वक और विस्तार से, भौतिक दस्तावेजों के साथ-साथ मौखिक साक्ष्य पर भी विचार किया था और फिर इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि अपीलकर्ता नंबर 2 प्रथम दृष्टया मामला बनाने में विफल रहा है। ऐसी स्थिति में अपीलकर्ता सं. 2 किसी भी प्रकार की निषेधाज्ञा अपने पक्ष में विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए पाने का अधिकारी नहीं है।

13. यह सुस्थापित है कि निषेधाज्ञा का आदेश प्राप्त करने के लिए, जो पक्ष इस तरह के निषेधाज्ञा की मांग करता है, उसे यह साबित करना होगा कि उसने मुकदमे में प्रथम दृष्टया मामला विचारण के लिए बनाया है, सुविधा का संतुलन भी उसी के पक्ष में है और यदि निषेधाज्ञा नहीं दी गई तो उसे अपूरणीय क्षति होगी। लेकिन यह भी समान रूप से स्थापित है कि जब कोई पक्ष मुकदमे के लिए प्रथम दृष्टया मामला साबित करने में विफल रहता है, तो सुविधा के संतुलन या संबंधित पक्ष को अपूरणीय क्षति और चोट पर विचार करने का प्रश्न बिल्कुल भी महत्वपूर्ण नहीं होगा, अर्थात यदि वह पक्ष मुकदमे के विचारण के लिए प्रथम दृष्टया मामले को साबित करने में विफल रहता है तो न्यायालय उसके पक्ष में निषेधाज्ञा देने के लिए खुली नहीं है, भले ही उसने सुविधा के संतुलन का मामला अपने पक्ष में बना लिया हो और यदि कोई निषेधाज्ञा आदेश नहीं दिया गया उसे अपूरणीय क्षति सामना करना पड़े।। इसलिए, इस सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए,  अब देखें कि क्या अपीलकर्ता उच्च न्यायालय में दो अपीलों के लंबित रहने के दौरान निषेधाज्ञा का आदेश प्राप्त करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला साबित करने में सक्षम है।

विचारण न्यायालय के फैसले के पैरा 21 में यह पाया गया हैः-

“.ऊपर उद्धृत शब्द 'निश्चित और 'कुछ' और 'जब हम अभी भी पारंपरिक कर्तव्यों को पूरा करने की स्थिति में हैं , प्रथम

> दृष्टया दिखाते हैं कि पहले प्रतिवादी ने अपने सभी अधिकारों का त्याग नहीं किया है, विशेषाधिकार और कर्तव्य और दूसरे याचिकाकर्ता को पूर्ण मठाधिपति नहीं बनाया गया है। लगातार प्रचलित परंपरा के अनुसार, वट्टू ने संन्यास में दीक्षा ली और उत्तराधिकारी के रूप में नामित किया गया, मठाधिपति के निधन के बाद वह मठाधिपति बन जाएगा।''

विचारण न्यायालय के उपरोक्त निष्कर्ष से, यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी नंबर 1 ने अपीलकर्ता नंबर 2 के पक्ष में मठाधिपति के रूप में अपनी सभी शक्तियों को निरस्त नहीं किया था और उसे केवल कुछ शक्तियां सौंपी गई थीं। ट्रायल कोर्ट के फैसले के पैरा 22 में, यह प्रतिपादित किया है किः-''निम्नलिखित परिस्थितियाँ भी पहले प्रतिवादी के संस्करण का समर्थन करती हैं। दूसरे याचिकाकर्ता ने स्वयं दिनांक 4.11.99 को एक पत्र संबोधित किया है जो इस प्रकार हैः ृहाल की घटनाओं के मद्देनजर, हमने श्री संष्टान (अधिकारथ विषयों) के अधिकार के साथ-साथ समाज की धार्मिक गतिविधियों (धार्मिक विषयों) से संबंधित मामलों में शामिल नहीं होने का निर्णय लिया है। इसलिए हम बार-बार प्रार्थना करते हैं और निवेदन करते हैं कि हमें यथाशीघ्र पुनः उन्मुक्त कर दें।'

इससे प्रथम दृष्टया पता चलता है कि दूसरा याचिकाकर्ता अभी भी पहले मठाधिपति को पहचान रहा है, और इसलिए उसने उससे खुद को

''कुछ गतिविधियों से मुक्त करने का अनुरोध किया है।

विचारण न्यायालय के उपरोक्त निष्कर्षों, टिप्पणियों को ध्यान से पढ़ने से पता चलता है कि 4 नवंबर, 1999 के पत्र में स्पष्ट रूप से इस तथ्य का उल्लेख किया गया है कि अपीलकर्ता नंबर 2 मठ कि कुछ गतिविधियों से मुक्त होना चाहता था और उन्होंने वास्तव में इस संबंध में प्रतिवादी नंबर 1 से अनुमति मांगी थी। इसलिए, हमारे विचार में, अंतिम निर्णय में विचारण न्यायालय द्वारा यह सही माना गया कि अपीलकर्ता नंबर 2 ने 1994 की कथित उद्घोषणा के बाद भी प्रतिवादी नंबर 1 को मठ का मठाधिपति मानना जारी रखा।

विचारण न्यायालय ने पैरा 24 में फिर से कहा थाः

> ''यदि सभी परिस्थितियों पर विचार किया जाए तो इस स्तर पर जो अनूठा निष्कर्ष निकाला जा सकता है, वह यह है कि, पहले प्रतिवादी ने मठाधिपति के रूप में अपनी सभी शक्तियों और विशेषाधिकारों का त्याग नहीं किया है और दूसरे याचिकाकर्ता को केवल कुछ शक्तियां और विशेषाधिकार प्रदान किए गए हैं। ध्यान में रखते हुए उपरोक्त चर्चा के आधार पर, मेरा मानना है कि दूसरा याचिकाकर्ता निषेधाज्ञा आदेश का हकदार नहीं है जैसा कि उसने दावा किया है।''
>
> (जोर दिया गया)

विचारण न्यायालय के उपरोक्त निष्कर्षों के मद्देनजर अपीलकर्ता नं. 2 निषेधाज्ञा आदेश का हकदार नहीं था जैसा कि उसके द्वारा दावा किया गया था, ट्रायल कोर्ट के निष्कर्षों के साथ किसी भी अवैधता या दुर्बलता को ढूंढना मुश्किल है, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, कम से कम प्रथम दृष्टया जिसके संबंध में, उच्च न्यायालय भी सहमत था। इसलिए, हमारा विचार है कि मठ के मठाधिपति की शक्तियों को अपीलकर्ता नंबर 2 के पक्ष में नहीं छोड़ा गया था। यह सुस्थापित है कि मठ के मठाधिपति की ऐसी शक्ति मौजूदा मठाधिपति की मृत्यु के बाद किसी अन्य व्यक्ति या किसी अन्य को हस्तांतरित हो सकती है, जो मठ के रीति-रिवाजों और परंपराओं के अनुसार मठ के मठाधिपति के रूप में उसका उत्तराधिकारी हो सकता है।

14. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री नरीमन ने प्रस्तुत किया कि चूंकि यथास्थिति का आदेश मुकदमे के निस्तारण तक जारी था, इसलिए उस स्थिति में उच्च न्यायालय में अपील लंबित रहने के दौरान यथास्थिति जारी रखने की अनुमति दी जानी चाहिए।. यह सही है कि चूंकि उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित अपीलों का निर्णय भी तथ्यों के आधार पर किया जाना है, इसलिए मूल रूप से इस स्थिति को उच्च न्यायालय द्वारा बनाए रखने की आवश्यकता है। लेकिन वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यों

और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और अपीलकर्ता नंबर 2 को दिए गए अधिकारों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, जैसा कि प्रथम दृष्टया यहां पहले उल्लेख किया गया है और यहां ऊपर की गई हमारी चर्चाओं के मद्देनजर अपीलकर्ता नंबर 2 ने सुनवाई के लिए प्रथम दृष्टया कोई मामला बनाने में विफल रहने के कारण, हमें नहीं लगता कि उच्च न्यायालय द्वारा अपील के निस्तारण तक ऐसी स्थिति को जारी रखने की अनुमति दी जानी चाहिए। इस स्तर पर, हम ध्यान दे सकते हैं कि विचारण न्यायालय ने निषेधाज्ञा के लिए आवेदन का निपटारा करते हुए कहा कि हालांकि अपीलकर्ता नंबर 2 निषेधाज्ञा के आदेश का हकदार नहीं था क्योंकि वह यह साबित करने में विफल रहा था कि उसके पास प्रथम दृष्टया मामला था और सुविधा का संतुलन उसके पक्ष में था लेकिन मुकदमे के निपटारे तक यथास्थिति बरकरार रखी गई। इस संबंध में किए गए निष्कर्षों को नीचे पुनः प्रस्तुत किया जा सकता हैः

> “परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता यह साबित करने में विफल रहे हैं कि उनके पास प्रथम दृष्टया मामला और सुविधा का संतुलन है, इसलिए, दूसरा याचिकाकर्ता अंतरिम आदेश का हकदार नहीं है, जैसा कि प्रार्थना की गई थी, यानी उत्तरदाताओं को शक्तियों के प्रयोग में किसी भी तरह से हस्तक्षेप करने से रोकना। पहले याचिकाकर्ता मठ के 21वें

पोप के कर्तव्य और विशेषाधिकार। हालाँकि, कारणों से यह स्पष्ट है कि दूसरे याचिकाकर्ता को पवित्र देवताओं और अन्य सामग्री और प्रतीक चिन्ह सौंपे गए हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि दूसरा याचिकाकर्ता पवित्र देवता त्रिकाल की पूजा कर रहा है। इसलिए, प्रतिवादियों को दूसरे याचिकाकर्ता द्वारा पवित्र देवताओं की त्रिकाल पूजा करने में हस्तक्षेप करने से रोका जाता है। आगे यह निर्देशित किया जाता है कि पहला प्रतिवादी अपनी शक्तियों, विशेष रूप से बैंक खातों और अन्य सभी से निपटने के अधिकार को नहीं सौंपेगा। किसी अन्य व्यक्ति को श्री काशी मठ संस्थान की चल और अचल संपत्ति, यानी प्रथम प्रतिवादी स्वयं श्री काशी मठ संस्थान के धन और अन्य चल और अचल संपत्तियों से निपटेगा और वह किसी अन्य व्यक्ति को जनरल निष्पादित करके इसके निपटान के लिए अधिकृत नहीं करेगा। मुकदमे के निपटारे के लिए लंबित पावर ऑफ अटॉर्नी या कोई अन्य दस्तावेज...“ (जोर दिया गया)

यहां पहले की गई हमारी चर्चाओं के मद्देनजर और नीचे की अदालतों के उपरोक्त निष्कर्षों पर ध्यानपूर्वक विचार करने के बाद, जैसा कि यहां ऊपर उल्लेख किया गया है, निषेधाज्ञा के लिए आवेदन पर, यह सुरक्षित

रूप से माना जा सकता है कि हालांकि विचारण न्यायालय ने पार्टियों को मुकदमे के निस्तारण तक मठ के मठाधिपति के कामकाज के मामले में यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया था, लेकिन ऐसा आदेश इस निष्कर्ष परं दिया गया था कि अपीलकर्ता नंबर 2 यथास्थिति का आदेश प्राप्त करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला साबित करने में विफल रहा था। इसके अलावा, यह स्थापित है कि जब पक्षकारान विचारण के लिये जाते हैं और अपने पक्ष के समर्थन में साक्ष्य पेश करते हैं तब न्यायालय के समक्ष प्रकरण के निस्तारण के समय अलग निष्कर्ष पर पहुंचने और तदनुसार राहत देने के लिए न्यायालय के पास खुला होगा। जैसा कि यहां पहले उल्लेख किया गया है, मुकदमे का फैसला करते समय, विचारण न्यायालय ने मठाधिपति के शीर्षक की घोषणा के संबंध में कहा कि प्रतिवादी संख्या 1 ने कभी भी अपीलकर्ता संख्या 2 के पक्ष में मठ के मठाधिपति के रूप में अपनी शक्तियों को निरस्त नहीं किया था और इसलिए, सबूतों का आकलन करने और पक्षकारान के विद्वान वकील की प्रस्तुतियों के बाद, स्थायी और आज्ञात्मक निषेधाज्ञा के लिए एक डिक्री दी है और निर्देश दिया है अपीलकर्ता संख्या 2 को प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में मठ से संबंधित उसके कब्जे में मौजूद पवित्र देवताओं और अन्य सामग्रियों को वापस बहाल करने के लिए कहा गया है। विचारण न्यायालय ने भी अंतिम फैसले में रिकॉर्ड पर मौजूद सभी सबूतों और सामग्रियों पर विचार करने के बाद माना कि सुविधा का संतुलन प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में था और

यह कि अपीलकर्ता संख्या 2 यह साबित करने में असफल रहा कि वह तत्कालीन मठाधिपति की उद्घोषणा के बाद 1994 से मठाधिपति के रूप में सफल हुआ, जो कि प्रतिवादी संख्या 1 है। बेशक, विचारण न्यायालय के अंतिम निष्कर्षों पर पहली अपील में उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जाएगा, लेकिन हम इस स्तर पर प्रथम दृष्टया यह नहीं मानते हैं कि ऐसे निष्कर्षों को गलत ठहराया जा सकता है और विचारण न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप की जरूरत है.

15. इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में, साथ ही विचारण न्यायालय ने बताया था कि उद्घोषणा, जिसे अपीलकर्ता नंबर 2 ने अपने मामले के समर्थन में उद्धृत किया था, इस आशय से स्पष्ट नहीं है कि प्रतिवादी संख्या .1 ने अपीलकर्ता नंबर 2 के पक्ष में मठ के मठाधिपति के रूप में अपनी सभी शक्तियों की निंदा की थी। वास्तव में, यह प्रतिवादी नंबर 1 की दलील थी कि उसने केवल अपनी कुछ शक्तियों को निरस्त किया है, सभी को नहीं और वह अभी भी मठ के मठाधिपति के रूप में जारी है। विचारण न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय के उपरोक्त निष्कर्षों का सावधानीपूर्वक अवलोकन और प्रतिवादी नंबर 1 की प्रस्तुति पर विचार करने के बाद भी कि प्रतिवादी नंबर 1 ने केवल अपनी कुछ शक्तियों को निरस्त किया है, सभी को नहीं और वह अभी भी मठ के मठाधिपति के रूप में बने रहने से प्रथम दृष्टया पता चलेगा कि अपीलकर्ता नंबर 2 यह

साबित करने में असफल रहा कि उसे प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा मठ का मठाधिपति बनाया गया था या प्रतिवादी नंबर 1 ने मठ के मठाधिपति के अपने अधिकार को त्याग दिया था।

16. उपरोक्त निष्कर्ष के मद्देनजर, हमारे लिए इस स्तर पर अपीलकर्ता संख्या 2 के मथाधिपतित्व के शीर्षक के प्रश्न में जाना आवश्यक नहीं है, जिस पर अपील पर निर्णय लेते समय उच्च न्यायालय द्वारा विस्तार से निर्णय लिया जाएगा। लेकिन हम यह स्पष्ट करते हैं कि विचारण न्यायालय द्वारा अंतिम फैसले में और उच्च न्यायालय द्वारा लंबित अपीलों में निषेधाज्ञा के आवेदन पर दिए गए निष्कर्षों को प्रथम दृष्टया निष्कर्ष माना जाएगा जिसे उच्च न्यायालय द्वारा अपीलों के निस्तारण के समय अंतिम नहीं माना जाएगा।

17. इस मामले का एक और पहलू भी है. इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि श्री संस्थान की परंपरा के अनुसार, मठाधिपति सीट को छोड़ा नहीं जा सकता है और प्रतिवादी नंबर 1 अपने निधन तक मठ के मठाधिपति के रूप में काम करना जारी रखेगा और उनके निधन के बाद, शिष्य या प्रतिवादी के नामांकित उत्तराधिकारी नंबर 1 मठाधिपति का पद ग्रहण करेगा। इसके अलावा, रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों से यह नहीं कहा जा सकता है कि 12 दिसंबर, 1994 की उद्घोषणा के आधार पर अपीलकर्ता नंबर 2 वास्तव में मठाधिपति था, जैसा कि उसके द्वारा दावा किया गया

था, कम से कम प्रथम दृष्टया जो अपीलकर्ता नंबर 1 को अनुमति दे सकता था। न्यायालय से निषेधाज्ञा का आदेश प्राप्त करें। साथ ही, हमें याद दिलाना चाहिए कि अपीलकर्ता संख्या 2 ने स्वयं 4 नवंबर 1999 को एक पत्र लिखकर प्रतिवादी संख्या 2 को मठ की गतिविधियों से मुक्त करने का अनुरोध किया था। पत्र से यह भी प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता क्रमांक 2 ने प्रतिवादी क्रमांक 1 को मठ का मठाधिपति कहकर संबोधित किया था। ट्रायल कोर्ट के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि मठाधिपति की सीट मौजूदा मठाधिपति के उत्तराधिकारी को उसकी मृत्यु के बाद ही हस्तांतरित की जा सकती है, उससे पहले नहीं, जो कि रीति-रिवाजों और परंपराओं से स्पष्ट है । यह प्रथम दृष्टया स्वीकार्य नहीं है कि प्रतिवादी नंबर 1 ने अपीलार्थी नंबर 2 के पक्ष में मठाधिपति की सीट छोड दी थी और ऐसी सीट अपीलकर्ता नंबर 2 की मृत्यु से पहले ग्रहण की जा सकती थी। मौजूदा मठाधिपति यानी प्रतिवादी नंबर 1 अथवा प्रतिवादी नंबर 1 के द्वारा े निष्पादित दस्तावेज के जरिये मठाधिपति के पद को त्याग कर सकते थे।

18. यह स्थिति होने के कारण, हम उच्च न्यायालय के साथ-साथ अपीलों के निस्तारण के समय द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से पूरी तरह सहमत हैं कि मठाधिपति के पद का उत्तराधिकार केवल मौजूदा मठाधिपति की मृत्यु के बाद ही किया जा सकता है, इससे पहले नहीं। यह। इसके

अलावा, जैसा कि यहां पहले उल्लेख किया गया है, 12 दिसंबर, 1994 की उद्घोषणा का अवलोकन निर्णायक रूप से यह सुझाव नहीं देगा कि प्रतिवादी नंबर 1 ने अपीलकर्ता नंबर 1 के पक्ष में मठ के मठाधिपति के रूप में अपनी सभी शक्तियों का त्याग कर दिया था। यहां ऊपर की गई हमारी चर्चाओं और स्वीकार किए गए तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि ट्रायल कोर्ट से लेकर नीचे की सभी अदालतें, मुकदमे की पेंडेंसी के दौरान यथास्थिति प्रदान करती हैं यानी दिनांक 29 सितंबर, 2000 और चतुर्थ अतिरिक्त द्वारा पारित निर्णय भी जिला न्यायाधीश, तिरूपति ने उस मुकदमे में, जो अब अपील में चुनौती के अधीन है और उच्च न्यायालय के आक्षेपित फैसले में भी कहा था कि अपीलकर्ता नंबर 2 अपने पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला बनाने और सुविधा के संतुलन में विफल रहा। उनके खिलाफ भी तदनुसार, हमें संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपनी विवेकाधीन शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं मिलता है।

19. उपरोक्त कारणों से, अपीलें खारिज की जाती हैं। हालाँकि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि इस निर्णय में हमारे द्वारा जो भी टिप्पणियाँ व निष्कर्ष निकाले गए हैं या टप्पणियाँ व निष्कर्ष जो लंबित अपीलों में अंतरिम आवेदनों पर निर्णय लेते समय उच्च न्यायालय द्वारा की गई हैं वह अपीलकर्ताओं की उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित अपीलों में पर प्रतिकूल

प्रभाव डालना नहीं होगा। उच्च न्यायालय को इस निर्णय में या यहाँ तक कि निषेधाज्ञा के आवेदनों में उच्च न्यायालय के निर्णय में की गई किसी भी टिप्पणी व निष्कर्ष से प्रभावित हुए बिना गुण-दोष के आधार पर अपीलों पर स्वतंत्र रूप से निर्णय लेना चाहिए।

20. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय से अनुरोध है कि वह लंबित अपीलों को इस आदेश की प्रति की आपूर्ति की तारीख से छह महीने के भीतर जल्द से जल्द निपटाए। खर्चे के रूप में कोई आदेश नहीं होगा।

याचिका खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अंकुश भदौरिया  (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।